Vagisha International Multidisciplinary Research Journal
(International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal)
Volume-01, Issue-02, April-2026| ISSN: 3139-2776 (online)
Available online at:https://vimrj.com/

भारत में राष्ट्रवाद का विकास : औपनिवेशिक प्रतिरोध और जनजागरण

यादव रत्नेश कुमार केदारनाथ[1] एवं डॉ. मनोज सिंह यादव[2]

[1]शोध छात्र, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, काशी नरेश राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ज्ञानपुर भदोही
[2]सहायक आचार्य, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग, काशी नरेश राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ज्ञानपुर भदोही
Email ID: rockwithbunty@gmail.com

Received: 14 March 2026 | **Accepted:** 25 March 2026 | **Published:** 25 April 2026

सारांश

भारत में औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संघर्ष से जो राष्ट्रवाद उभरता है वह अपने आप में अनूठा और अलग था। विचार जगत में भारतीय राष्ट्रवाद एक नितांत नई परिघटना थी जो इसके पहले विश्व में कहीं नहीं देखी गई थी। यह राष्ट्रवाद मूल रूप से लोकतांत्रिक और समानता पर आधारित था और शक्ति विस्तार पर आधारित यूरोपीय राष्ट्रवाद से सर्वथा भिन्न था। औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध सामूहिक प्रतिरोध के प्रतिफल के रूप में प्राप्त भारत का राष्ट्रवादी विचार विभिन्न कारणों से दुनिया के अन्य देशों के राष्ट्रवाद के विचार से अलग है। आधुनिक भारत के इतिहास से यह स्पष्ट होता है कि स्वतंत्रता संग्राम और राष्ट्रीय आंदोलन का अपना एक सशक्त सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक आधार था जिसने भारतीय राष्ट्रवाद को गति दी। भारत में राष्ट्रवाद का विकास एक निरंतर चलने वाली सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया रही है, जिसमें औपनिवेशिक प्रतिरोध और जनजागरण दोनों ने परस्पर पूरक की भूमिका निभाई और स्वतंत्रता संग्राम को राष्ट्रीय आंदोलन में रूपांतरित किया।

मुख्य शब्दः राजनीतिक चेतना, जनजागरण, राष्ट्रवाद, उपनिवेशवाद, स्वतंत्रता आंदोलन।

परिचय

"आप अपने विशेष अध्ययन के लिए मानव मस्तिष्क के किसी भी क्षेत्र को चुनें, चाहे वह भाषा हो, धर्म हो, मिथक हो, दर्शन हो, चाहे कानून या रिवाज हों, आदिम कला या आदिम विज्ञान हो हर जगह आपको भारत जाना है, चाहे आप उसे पसंद करें या ना करें, क्योंकि इंसान की इतिहास की कुछ अत्यंत मूल्यवान और अनुकरणीय सामग्री में से कुछ का कोष भारत में और भारत में ही है।"

मैक्समूलर की शोधपरक पुस्तक 'इंडियाः व्हाट कैन इट टीच अस?' से उद्धृत उपरोक्त पंक्तियां

भारत की समृद्ध बौद्धिक विरासत का वर्णन करती हैं। एक राष्ट्र के रूप में भारत की कल्पना का अवलोकन हम प्राचीन भारतीय इतिहास में ही कर सकते हैं जहां चाणक्य सभी गणराज्यों और महाजनपदों को पश्चिमी आक्रमणकारियों के विरुद्ध एकजुट होने के लिए सलाह देता है। परंतु आधुनिक काल में भारत के प्रमुख विचारकों महात्मा गांधी, बाल गंगाधर तिलक, डॉ भीमराव अंबेडकर, सुभाष चंद्र बोस और जवाहरलाल नेहरू के राष्ट्र से संबंधित विचार चाणक्य के राष्ट्र से कई मायनों में अलग हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि इन दोनों ही परिस्थितियों में राष्ट्र की चिंता एक विदेशी शक्ति के विरुद्ध ही उभरती है। जहां प्राचीन भारत में सिकंदर के आक्रमण को रोकने हेतु राष्ट्रवाद की विचारधारा का जन्म होता है, वहीं आधुनिक भारतीय समाज में उपनिवेशवादी शक्तियों के विरुद्ध भारतीय राष्ट्रवाद का जन्म होता है। ए आर देसाई भारतीय राष्ट्रवाद के संदर्भ में तर्क देते हुए कहते हैं कि, 'अंग्रेजों के आगमन के पहले के भौतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक रूप से बिखरे समूहों के कमोबेस एक साथ जुड़े आधुनिक राष्ट्र के रूप में विकास अंग्रेजों या फ्रेंच लोगों की तरह नहीं हुआ। भारतीय राष्ट्रवाद विदेशी विजय और औपनिवेशिक शासन होने की स्थिति में विकसित हुआ'।

भारत में राष्ट्रवाद का विकास एक जटिल, बहुस्तरीय और ऐतिहासिक प्रक्रिया रही है, जिसमें औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध प्रतिरोध और जनजागरण की प्रक्रियाएँ केंद्रीय भूमिका में रही हैं। अंग्रेजों की विभाजनकारी नीतियों, आर्थिक शोषण और सांस्कृतिक दमन ने भारतीय समाज को एक साझा दुःख में बाँधा, जिससे राष्ट्र के रूप में आत्मबोध का उदय हुआ। भारत में राष्ट्रवाद के इतिहास लेखन पर कई धाराएं विद्यमान हैं, जिन्होंने भारत में राष्ट्रवाद के उद्भव एवं विकास के कारणों पर अपना विचार प्रस्तुत किया है। भारत में राष्ट्रवाद कई चरणों में विकसित हुआ है, जिसमें कई प्रकार के आंदोलन संवैधानिक से लेकर क्रांतिकारी भी रहे हैं।

भारत में राष्ट्रवाद

पार्थ चटर्जी ने उपनिवेशों में राष्ट्रवाद के विकास पर विस्तार से लिखते हुए स्पष्ट कहा कि, 'उपनिवेशविरोधी राष्ट्रवाद स्वयं की संप्रभुता का क्षेत्र बनाता है, जो साम्राज्यवाद के विरुद्ध राजनीतिक संघर्ष के शुरू होने के पहले ही औपनिवेशिक समाज का हिस्सा होता है और यही डोमेन वास्तव में एशिया एवं अफ्रीका के समाज के राष्ट्रवाद की मुख्य विशेषता है।' भारत में औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध संघर्ष से जो राष्ट्रवाद उभरता है वह अपने आप में अनूठा और अलग था। विचार जगत में भारतीय राष्ट्रवाद एक नितांत नई परिघटना थी जो इसके पहले विश्व में कहीं नहीं देखी गई थी। यह राष्ट्रवाद मूल रूप से लोकतांत्रिक और समानता पर आधारित था और शक्ति विस्तार पर आधारित

यूरोपीय राष्ट्रवाद से सर्वथा भिन्न था। औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध सामूहिक प्रतिरोध के प्रतिफल के रूप में प्राप्त भारत का राष्ट्रवादी विचार विभिन्न कारणों से दुनिया के अन्य देशों के राष्ट्रवाद के विचार से अलग है। यदि हम भारतीय राष्ट्रवाद की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का अवलोकन करें तो यह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है कि पूरे भारतीय भूदृभाग में राजनीतिक एकता सदैव भले ही ना रही हो मगर विभिन्न धार्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक शक्तियां भारतीय समाज को हमेशा जोड़े रखी रही हैं। भारत के अलग–अलग धर्म और पंथों की शाखाएं पूरे देश में फैली हुई हैं। जो भारतीय समाज को जोड़ने का काम करती हैं। इरफान हबीब भारतीय राष्ट्रवाद की विशिष्टता बताते हुए कहते हैं कि, 'भारतीय राष्ट्रवाद की प्रारंभ से ही एक विशेषता यह रही है कि उसने ब्रिटेन के आर्थिक शोषण की आलोचना की है।'

भारत की साझी विरासत और मूल पहचान ने उपनिवेशवाद के दौर में गुलाम बनाने वाली ताकतों के विरुद्ध भारतीय समाज को एकजुट रखने का काम किया और इससे आधुनिक भारतीय राष्ट्रवाद को एक नई धारा मिलती है। आधुनिक भारत के इतिहास से यह स्पष्ट होता है कि स्वतंत्रता संग्राम और राष्ट्रीय आंदोलन का अपना एक सशक्त सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक आधार था जिसने भारतीय राष्ट्रवाद को गति दी। बिपिन चंद्र का स्पष्ट मानना है कि राष्ट्रीय आंदोलन राष्ट्रीय चेतना अथवा स्वतंत्रता के विचार के प्रसार का परिणाम था भारत राष्ट्र बनने की प्रक्रिया में है और भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को जनता का आंदोलन माना जाता है।

राष्ट्रवाद के विकास की प्रवाहमान प्रक्रिया

भारतीय राष्ट्रवाद के अभ्युदय के सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारक के रूप में उन परिस्थितियों का उल्लेख किया जाता है जो औपनिवेशिक शासन व्यवस्था ने उत्पन्न की थी। दूसरे शब्दों में औपनिवेशिक व्यवस्था के विरुद्ध चलाए जाने वाले संघर्ष और प्रतिरोध ने भारतीय राष्ट्रवाद को जन्म दिया। 'औपनिवेशिक शासन के शिकंजे में जकड़े विभिन्न देशों में उससे मुक्ति के लिए जो राष्ट्रीय आंदोलन चला उन सबके मुकाबले भारत के राष्ट्रीय आंदोलन को उपनिवेशवाद के आर्थिक वर्चस्व और शोषण की प्रकृति एवं चरित्र की समझ सबसे ज्यादा थी।'

ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देखें तो 19वीं शताब्दी के पूर्व भारतीय उपमहाद्वीप के निवासियों की पहचान उनके धर्म, जाति, भाषा, क्षेत्र आदि पर आधारित थी परंतु औपनिवेशिक शासन के दौरान विकसित की गई एकात्मक प्रशासनिक व्यवस्था, परिवहन के नए साधनों के विकास द्वारा भूदृभाग में आवागमन, संचार के माध्यमों, समाचार पत्र आदि के विकास, एकीकृत न्याय व्यवस्था की स्थापना तथा अंग्रेजी शिक्षा के व्यापक प्रसार के द्वारा स्थानीय निवासियों को आधुनिक राजनीतिक सिद्धांतों से

अवगत करने का मौका देना आदि। अंततोगत्वा भारतीय स्वाधीनता संग्राम लोगों को परस्पर जोड़ने में जहां सफल रहा वहीं पहली बार राष्ट्र की भावना को जन्म देने में भी इससे सफलता हासिल हुई।

भारत में राष्ट्रवाद के उद्भव एवं विकास से पूर्व राष्ट्रवादी विचारधारा की एक आधार भूमि भी है। यह आधारभूमि उपनिवेशवाद के खिलाफ संघर्ष से बननी शुरू होती है। लेकिन उपनिवेशवाद के विरुद्ध संघर्ष के पहले भारतीय राष्ट्रवादी विचारकों के समक्ष यह चुनौती थी कि उपनिवेशवाद को व्यवस्थित ढंग से समझा जाए और फिर इस आधार पर राष्ट्रवादी विचारधारा की निर्मिती की जाए। कांग्रेस की स्थापना के पश्चात राष्ट्रवादी विचारों का त्वरित उभार और उपनिवेशवाद के खिलाफ व्यवस्थित प्रतिरोध की शुरुआत होती है। "शुरू से कांग्रेस ने अपने आप को एक पार्टी के रूप में नहीं बल्कि एक आंदोलन के रूप में लिया। एक आंदोलन के रूप में इसने लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवाद के प्रति प्रतिबद्ध अपने समय की सभी राजनीतिक प्रवृत्तियों, विचारधाराओं और सामाजिक वर्गों व समूहों के साथ अपने को जोड़कर रखा।"

यदि हम तत्कालीन भारतीय समाज का अध्ययन करें तो राष्ट्रवादी विचारधारा ने भारतीय समाज में मौजूद क्षेत्रीयता की भावना को सबसे पहले आधार बनाया, पारंपरिक रूप से देशभक्ति की भावना जिसे लोक नैतिकता और सदाचारी शासन के स्थानीय विचारों ने बुद्धिवादी रूप दिया था उसके आधार पर स्वयं को खड़ा करने का कार्य किया। लेकिन इस प्रकार की क्षेत्रीय एकता के समक्ष भी कई प्रकार की चुनौतियां रही हैं। क्षेत्रीय एकता का धीरे–धीरे राष्ट्रीय एकता के रूप में स्थापित होना अनेक प्रकार के अंतरविरोध से गुजरने की एक प्रकार से प्रक्रिया थी क्योंकि क्षेत्रीय स्तर पर विचार और चेतना के अनेक स्तर और रूप विद्यमान थे। पूर्ण रूप से बंटे हुए भारतीय समाज के बीच एकता स्थापित करना निश्चित रूप से कठिन कार्य था लेकिन फिर भी क्योंकि एक राष्ट्र राज्य की भावना ने जन्म ले लिया था इसलिए धीरे–धीरे राष्ट्रवादी विचारधारा ने मुख्य धारा के रूप में अपना स्थान बनाया। राष्ट्रवाद की यह चेतना उपनिवेशवाद के विरोध से उपजी देशभक्ति की भावना पर आधारित थी जिसमें भारत की प्राचीन समृद्ध परंपरा को मुख्यतया आधार बनाया गया था।

भारत में राष्ट्रवाद की वास्तविक नींव 1857 के विद्रोह में देखी जा सकती है। एक ऐसा विद्रोह जिसमें भारतीय समाज के अलग–अलग वर्गों के साथ लगभग आदि फौज शामिल थी। 1857 की क्रांति ने संपूर्ण उत्तर भारत को अपनी परिधि में शामिल किया। यह विद्रोह हिंदूदृमुस्लिम एकता की अनोखी मिसाल भी बना। 1857 की क्रांति ने भारतीयों को अपने हक के प्रति जागरूक किया। इसके पश्चात भारतीयों ने राष्ट्रवादी विचारधारा से प्रेरित होकर संगठित तौर पर अपनी आवाज को उठाना शुरू किया। इसी दौर में भारत के नव शिक्षित वर्ग का राजनीतिक यथार्थ, वैचारिक चेतना, विरोध,

संघर्ष, रणनीति, विचारधारा, संगठन और नेतृत्व सबसे सामना हुआ। भारत में राष्ट्रवादी विचार का प्रसार कांग्रेस की स्थापना के साथ और त्वरित गति से आगे बढ़ता है।

19वीं सदी के अंत तक जब उदारवादी राजनीति कमजोर पड़ने लगी उस दौर में उग्रपंथी विचारधारा और नेताओं का तेजी से उभार होता है। बंगाल विभाजन के साथ उग्रपंथी विचारधारा का विस्तार तेजी से हुआ। स्वशासन की मांग तेजी से बढ़ने लगी थी और ब्रिटिश हुकूमत दबाव भी महसूस करने लगी। प्रथम विश्व युद्ध के दौर में महात्मा गांधी का आगमन भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन की एक महत्वपूर्ण घटना है। महात्मा गांधी के दौर में उदारवादी और उग्रवादी धीरे–धीरे एक मंच पर आते हुए प्रतीत होते हैं और भारत की राष्ट्रवादी विचारधारा के माध्यम से भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन अपने साध्य, स्वतंत्रता प्राप्ति में आखिरकार सफलता प्राप्त करता है। महात्मा गांधी के आगमन और स्वतंत्रता प्राप्ति तक राष्ट्रवाद के विभिन्न विचार हमारे सामने आते हैं और आजादी के बाद भी राष्ट्रवाद की विभिन्न धाराएं वर्तमान में भी भारतीय समाज में मौजूद और सतत रूप से प्रवाहमान हैं।

औपनिवेशिक प्रतिरोध एवं जनजागरण के कारण

आधुनिक भारत के इतिहास के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि औपनिवेशिक प्रतिरोध एवं जनजागरण के कारण के अनेक कारण विद्यमान हैं। जो कि निम्नवत हैं–

बौद्धिक पुनर्जागरण

पश्चिमी शक्तियों ने अपने हितों की पूर्ति हेतु भारत को उपनिवेश बनाने की कोशिश की और भारत लंबे समय तक ब्रिटिश उपनिवेशवाद का शिकार रहा। भौतिकवादी संस्कृति के विपरीत भारतीय सभ्यता के आध्यात्मिक मूल में निहित भाव ने भारतवासियों को न केवल जागृत करने का काम किया बल्कि पुनर्गठित करने में भी मदद की और इस एकता ने आधुनिक भारतीय राष्ट्रवाद को वैचारिक आधार प्रदान किया। 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में शिक्षित भारतीयों ने निरंकुश उपनिवेशवादी राजसत्ता की आलोचना करते हुए भारतीय सभ्यता और संस्कृति के श्रेष्ठ तत्वों को आधार बनाकर देशभक्ति की भावना का विकास किया जो कि राष्ट्रवाद से जुड़ी हुई भावना है। पश्चिम प्रभाव और देश की कमजोर होती स्थिति के फलस्वरुप भारत में जो पुनर्जागरण हुआ वह आरंभ में एक बौद्धिक पुनर्जागरण था जिसने भारत के साहित्य, शिक्षा और विचारधारा को गहराई से प्रभावित किया। यही पुनर्जागरण आगे चलकर एक नैतिक शक्ति बन जाता है जो धर्म और समाज सुधार की प्रक्रिया को गति देता है। अंत में हम यह देखते हैं कि पुनर्जागरण ने भारतीय समाज के आर्थिक एवं राजनीतिक आधुनिकीरण का कार्य किया जिसके माध्यम से हमें स्वतंत्रता प्राप्त होती है।

पाश्चात्य चिंतन तथा शिक्षा का प्रभाव

पाश्चात्य चिंतन तथा शिक्षा व्यवस्था ने भारत के राष्ट्रवाद के उद्भव एवं विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। भारतीय समाज में अंग्रेजी शिक्षा के आरंभ द्वारा एक नई प्रवृत्ति का विकास हुआ। अंग्रेजी शिक्षा के प्रसार के साथ भारत में आधुनिक पाश्चात्य विचारों को समझने तथा अपनाने में सहयोग मिला। जिससे भारत में राष्ट्रवादी विचारधारा को एक नई दिशा प्राप्त होती है। इसके साथ ही पाश्चात्य चिंतन तथा शिक्षा ने संपूर्ण भारतीय राष्ट्र को जोड़ने का काम किया। अंग्रेजी भाषा ने अलग–अलग स्थान के लोगों को जोड़ने के लिए संपर्क भाषा के रूप में कार्य किया और भारत में राष्ट्रवादी विचारधारा को एक अखिल भारतीय स्वरूप प्राप्त हुआ। पाश्चात्य शिक्षा ने पश्चिमी और पूर्वी जगत की सामाजिक और राजनीतिक स्थिति की तुलना करने में मदद की और इससे यह चेतना जागृत हुई कि भारत को कैसे अनगिनत सामाजिक और राजनीतिक अधिकारों से वंचित रखा गया है। पाश्चात्य चिंतन तथा शिक्षा ने भारत में एक नवीन बौद्धिक वर्ग के उदय में योगदान दिया जिसने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई और भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का नेतृत्व किया।

प्रेस एवं समाचार पत्रों की भूमिका

ब्रिटिश सत्ता के आगमन के साथ भारत में प्रेस का विकास भी त्वरित गति से हुआ 19वीं शताब्दी के आरंभ में भारतीय समाचार पत्रों एवं साहित्य में तेजी से वृद्धि हुई। भारत में प्रेस एवं समाचार पत्रों के विकास ने विभिन्न अवधारणाओं की समझ और प्रचारदृप्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। समाचार पत्रों ने स्वशासन, लोकतंत्र, अधिकार जैसी महत्वपूर्ण अवधारणाओं से जनमानस को अभिसिंचित किया। भारतीय समाचार पत्रों ने जहां एक तरफ उपनिवेशवादीदृसाम्राज्यवादी नीतियों की मुखर आलोचना की वहीं दूसरी तरफ भारतीयों को एकता के सूत्र में पिरोने का कार्य भी किया। समाचार पत्रों, जर्नल्स, पैम्फलेट तथा राष्ट्रवादी विचारधारा से संबंधित साहित्य ने भारतीय समाज के विभिन्न भागों में स्थित राष्ट्रवादी विचारकों के मध्य विचारों के आदान–प्रदान में सहयोग किया। इस प्रकार से हम देखते हैं कि भारत में प्रेस एवं समाचार पत्रों ने राष्ट्रवादी विचारधारा का न सिर्फ प्रचारदृ प्रसार किया बल्कि आम जनमानस को राष्ट्रवादी विचारधारा तथा विचारों से जोड़ने का काम भी किया।

मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों का उत्थान

आधुनिक काल में दुनिया भर में मध्यवर्ग का उभार एक नवीन और रुचिकर घटना थी। पाश्चात्य जगत में पुनर्जागरण के पश्चात एक नवीन चेतना का विकास हुआ और वैज्ञानिक चेतना से निर्मित हो रहे इस समाज द्वारा वैज्ञानिक आविष्कार तथा औद्योगीकरण की प्रक्रिया की शुरुआत हुई।

ब्रिटिश आर्थिक तथा प्रशासनिक व्यवस्था के परिणामस्वरुप उत्पन्न भारतीय मध्यवर्ग ने ब्रिटिश व्यवस्था में रुचि ली तथा त्वरित गति से अंग्रेजी भाषा को सीखा। जिससे उसे रोजगार तथा सामाजिक प्रतिष्ठा भी प्राप्त होने लगी। यह नवीन मध्य वर्ग अपनी शैक्षिक उपलब्धियों के कारण शासक वर्ग के समीप आता गया और इसमें एक नवीन प्रकार की बौद्धिक चेतना विकसित हुई। मध्य वर्ग की उत्पत्ति ने मध्यवर्गीय बुद्धिजीवियों के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की और यह मध्य वर्ग धीरे–धीरे भारत में राष्ट्रवादी विचारों के प्रसार का माध्यम बना तथा इसने भारत में राष्ट्रवादी आंदोलन का नेतृत्व भी किया। भारत के पढ़े–लिखे मध्यवर्गीय समाज यह ठहरकर विचार करने लगा कि आखिर उसका हित किन बातों में निहित है। ब्रिटिश सत्ता के दौर में बढ़ते हुए नस्लीय तनाव, धर्मांतरण की प्रवृत्ति और ब्रिटिश सत्ता की दमनकारी नीति ने भारतीय मध्य वर्ग को राष्ट्रवाद की विचारधारा से जोड़ने का काम किया।

सामाजिक–धार्मिक सुधार आंदोलन

19वीं शताब्दी भारतीय इतिहास में सामाजिक एवं धार्मिक सुधार आंदोलन की एक महत्वपूर्ण सदी है। 19वीं शताब्दी के सामाजिक एवं धार्मिक आंदोलनों ने भारत में एक प्रकार से नवजागरण का कार्यक्रम अपनाया और समूचे राष्ट्र को प्रभावित किया। भारत में पुनर्जागरण या जिसे हम नवजागरण भी कहते हैं ने भारत के आध्यात्मिक स्वरूप के साथ–साथ धार्मिक और सामाजिक सुधार में व्यापक प्रभाव डाला। ब्रिटिश सत्ता और शक्ति से पीड़ित, भारतीय सामाजिक और आध्यात्मिक जीवन और परंपराओं की रक्षा के लिए भारत के विभिन्न क्षेत्रों से सामाजिकदृधार्मिक आंदोलन का उदय हुआ। जिनके माध्यम से देश के विभिन्न भागों में महत्वपूर्ण सामाजिक सुधार किए गए और देश के मनोबल को उठाने का कार्य किया गया। इन महत्वपूर्ण सामाजिकदृधार्मिक सुधार आंदोलनों ने राष्ट्रवाद के प्रसार में क्रांतिकारी भूमिका का निर्माण किया।

किसान एवं आदिवासी असंतोष

1857 की क्रांति के पश्चात भारत के उत्पीड़ित वर्ग ने व्यापक रूप से ब्रिटिश सत्ता के खिलाफ प्रतिरोध दर्ज कराया। किसान और आदिवासी आंदोलन इनमें प्रमुख थे। भारत के किसानों और आदिवासियों ने ब्रिटिश सत्ता की विभेदकारी नीतियों के प्रति अलग–अलग क्षेत्र से जमकर विरोध दर्ज कराया। 19वीं शताब्दी के अंतिम दौर और 20वीं शताब्दी के प्रारंभिक दौर में जमीदारों और सूदखोरों के विरुद्ध किसानों का प्रतिरोध समूचे भारत में देखने को मिलता है। ब्रिटिश शासन व्यवस्था ने जमीदारों और सूदखोरों की निरंकुशता पर बहुत हस्तक्षेप नहीं किया इसलिए अलग–अलग हिस्सों में किसान विद्रोह दिखाई देते हैं। सूदखोरों और जमीदारों के खिलाफ विद्रोह की यह लहर धीरे–धीरे

उपनिवेशवादी सत्ता के विरुद्ध भी फैलती है और इस उपनिवेशवाद विरोध की लहर में हम राष्ट्रवादी विचारधारा की पहचान आसानी से कर सकते हैं। किसान विद्रोह के साथ हम आदिवासी असंतोष में भी राष्ट्रवादी विचारधारा की पहचान कर सकते हैं। 1857 के पश्चात भारत के सभी भागों में किसान और आदिवासी विद्रोह दिखाई देते हैं लेकिन वह अलग–अलग स्थान पर स्वायत्त रूप से घटित हुए। इसका एक प्रमुख कारण भारत के किसान समाज की जटिल वर्गीय संरचना थी, जिनमे भारी क्षेत्रीय अंतर पाया जाता है। लेकिन 19वीं सदी और 20वीं सदी के आरंभिक वर्षों में किसान और आदिवासी असंतोष ने ब्रिटिश उपनिवेशवाद को गंभीर चुनौती दी और राष्ट्रवादी विचारधारा को एक नवीन अभिव्यक्ति प्रदान की।

भारत की समृद्ध विरासत का पुनरावलोकन

यदि हम 19वीं शताब्दी के भारतीय समाज को देखें तो लगातार गुलामी की परिस्थितियों की वजह से यह समाज अपने मूल से कट चुका था। भारतीय की समृद्ध चिंतन परंपरा को मैक्स मूलर के निम्नलिखित शब्द स्पष्ट अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं, "यदि मैं संसार में किसी ऐसे देश की तलाश करूं जहां प्रकृति ने पृथ्वी के किसी हिस्से में संपत्ति, शक्ति और सुंदरता का वरदान दिया है तो मैं भारत की ओर इंगित करूंगा। यदि मुझे कोई पूछे कि आकाश के नीचे मानव मस्तिष्क ने अपने श्रेष्ठतम वरदानों को अत्यंत पूर्णता से विकसित किया है और जीवन की महानतम समस्याओं पर अत्यंत गहन चिंतन किया है और कुछ ऐसे प्रश्नों का हल पा लिया है जो उन लोगों का भी ध्यान आकर्षित कर सकती हैं जिन्होंने प्लेटो और कांट का अध्ययन किया है तो मैं भारत की तरफ इशारा करूंगा। यदि मुझसे कोई पूछे कि हम यूरोप के रहने वालों को जिन्हें यूनानियों और यहूदियों के विचारों पर लगभग पूरी तरह से पोषित किया गया है। उन्हें किस साहित्य से ऐसी सीख मिलेगी जिसकी बहुत जरूरत है ताकि हम अपना आंतरिक जीवन अधिक पूर्ण, अधिक व्यापक, अधिक वैश्विक, वास्तव में अधिक मानवीय और न सिर्फ जीवन बल्कि एक शाश्वत जीवन बना सकने वाली सीख प्राप्त कर सकते हैं तो मैं फिर से भारत की ओर इशारा करूंगा।"

तत्कालीन वैश्विक परिस्थितियां

19वीं एवं 20वीं शताब्दी की वैश्विक परिस्थितियों ने भारत में राष्ट्रवाद के उद्भव एवं विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। 19वीं एवं 20वीं शताब्दी में दुनिया में उपनिवेशवाद विरोधी आंदोलनों ने भारतीय लोगों में स्वतंत्रता की चेतना विकसित करने में योगदान दिया। 19वीं एवं 20वीं शताब्दी में पूरी दुनिया में स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व, न्याय से संबंधित विचार और व्यावहारिक स्तर पर उसके लिए आंदोलन निरंतर दुनिया के अलग–अलग हिस्सों में किया जा रहा था। वैज्ञानिक दृष्टिकोण,

ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना से लगातार तकनीकी का विकास और संचार के साधनों की उपलब्धता बढ़ती जा रही थी, जिसने धीरे–धीरे पूरी दुनिया को जोड़ने का काम किया और इससे दुनिया के अलग हिस्सों में घटित घटनाओं का प्रभाव हम भारत पर देख पाते हैं।

ब्रिटिश नीतियों के प्रति आक्रोश

ब्रिटिश शासकों की दमनकारी नीतियों ने भारत की आम जनता की भावनाओं को आहत करने का काम किया। ब्रिटिश अधिकारियों तथा कर्मचारियों ने सार्वजनिक रूप से आम भारतीयों को अपमानित किया। ब्रिटिश शासक भारतीयों में सदा हीन भावना के बीजारोपण का कार्य करते थे। ब्रिटिश शासन के उच्च पदों पर भारतीयों की नियुक्ति का अधिकार नहीं था। अंग्रेज शासक सदैव श्रेष्ठताबोध एवं जातीय अहंकार में डूबे रहे। शासन व्यवस्था में सदैव भारतीयों के साथ भेदभाव होता था, यहां तक एक ही प्रकार के अपराध के लिए दंड देने के मामले में भारतीयों के साथ दोयम दर्जे का व्यवहार किया जाता था।

साहित्य की भूमिका

19वीं एवं 20वीं शताब्दी में विभिन्न प्रकार के साहित्य सृजन ने राष्ट्रवाद के उद्‌भव एवं विकास में योगदान दिया। विभिन्न कविताओं, निबंधों, कथाओं, उपन्यासों एवं गीतों ने लोगों में राष्ट्रप्रेम की भावना जागृत करने का कार्य किया। हिंदी में भारतेंदु हरिश्चंद्र, बांग्ला में रविंद्रनाथ टैगोर, राजा राममोहन राय, बंकिम चंद्र चटर्जी, मराठी में विष्णुशास्त्री चिपलंकर, असमिया में लक्ष्मी दास वेजबरुआ इत्यादि उस काल के प्रख्यात राष्ट्रवादी साहित्यकार थे। इन साहित्यकारों ने अपनी महत्वपूर्ण रचनाओं के माध्यम से भारतीय समाज में स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व तथा राष्ट्रीयता की भावना के विकास में योगदान दिया। इस दौर के रचनाकारों ने राष्ट्रवाद के उद्‌भव एवं विकास को गति दी। 19वीं और 20वीं शताब्दी में भारतीय समाज के अलग–अलग हिस्सों से साहित्य और संस्कृति के ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिसमें तत्कालीन जनमानस में राष्ट्रीय भावनाओं को उभरने में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

निष्कर्ष

इस प्रकार से हम देखते हैं कि भारत में राष्ट्रवाद से संबंधित विचारधारा के उद्‌भव एवं विकास के अनेक कारण मौजूद हैं। भारत में राष्ट्रवाद की उत्पत्ति के संबंध में अनेक मतभेदों के बावजूद यह स्वीकार्य तथ्य है कि ब्रिटिश उपनिवेशवाद के विरुद्ध आधुनिक भारत में एक संगठित राष्ट्रवादी विचारधारा का जन्म हुआ जिसने भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन को गति दी और स्वतंत्रता प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त हुआ। निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि भारत में राष्ट्रवाद का विकास एक निरंतर चलने वाली सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक प्रक्रिया रही है, जिसमें औपनिवेशिक प्रतिरोध और

जनजागरण दोनों ने परस्पर पूरक की भूमिका निभाई और स्वतंत्रता संग्राम को राष्ट्रीय आंदोलन में रूपांतरित किया। यह राष्ट्रवाद बहुलता में एकता और समावेश की भावना से प्रेरित था, जिसने भारत को एक आधुनिक, स्वतंत्र और लोकतांत्रिक राष्ट्र के रूप में गढ़ने में अहम भूमिका निभाई।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मैक्समूलर (2023)ः भारत हमें क्या सिखा सकता है?, राजकमल पेपरबैक्स. पृष्ठ 26.
2. देसाई, ए आर (2018)ः भारतीय राष्ट्रवाद की सामाजिक पृष्ठभूमि, सेज प्रकाशन. पृष्ठ 244.
3. सिंह, अभय प्रसाद (2019)ः भारत में राष्ट्रवाद, ओरिएंट ब्लैकस्वान. पृष्ठ 6.
4. चटर्जी, पार्थ (1993)ः नेशन एंड इट्स फ्रेगमेंट्स,प्रिंसटन. पृष्ठ 44.
5. हबीब, इरफान (2021)ः भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन और राष्ट्रवाद, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली. पृष्ठ 114.
6. चंद्र, विपिन (1988)ः भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय. पृष्ठ 63.
7. चंद्र, विपिन, मुखर्जी, मृदुला (2015)ः भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय. पृष्ठ 64.
8. चंद्र, बिपिन, मुखर्जी, मृदुला (2015)ः भारत का स्वतन्त्रता संघर्ष, हिंदी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय. पृष्ठ 51.
9. मैक्समूलर (2023)ः भारत हमें क्या सिखा सकता है?, राजकमल पेपरबैक्स. पृष्ठ 20–21.